

विष्णु संवत्-२०३६, श्रावण सुद-१२, शनिवार, ता. २३-८-१९८०
 वचनामृत-२७८, २८२, २८४, २८५. प्रवचन नं. १६

विचार, मंथन सब विकल्परूप ही है. उससे भिन्न विकल्पातीत एक स्थायी ज्ञायक तत्त्व सो आत्मा है. उसमें 'यह विकल्प तोड हूं, यह विकल्प तोड हूं' वह भी विकल्प ही है; उसके उस पार भिन्न ही चैतन्यपदार्थ है. उसका अस्तित्वना ज्वालमें आये, 'मैं भिन्न हूं, यह मैं ज्ञायक भिन्न हूं' जैसा निरंतर घोटन रहे, वह भी अच्छा है. पुरुषार्थकी उग्रता तथा उस प्रकाशका आरंभ हो तो मार्ग निकलता ही है. पहले विकल्प नहीं टूटता परंतु पहले पक्का निर्णय आता है. २७८.

वचनामृत. २७८. प्रभु कहते हैं, प्रभु! विचार चले न और 'मंथन सब विकल्परूप ही है.' दूसरी चीजका तो संबंध है नहीं. शरीर, वाणी, मनका भी संबंध तो है नहीं. लेकिन अंदर आत्माका मंथन चले, विचार चले, वह भी विकल्प है, राग है, आलाला..! विचार और मंथन सब विकल्परूप ही है. विकल्परूप ही है. आत्माको लाभका कारण नहीं. आलाला..!

'उससे भिन्न विकल्पातीत...' अंदर भगवान विकल्प अर्थात् रागकी कल्पनाके भाव, असंभ्य प्रकारकी चिंताओंके विकल्प, उससे भगवान अंदर भिन्न है. विकल्पातीत, विकल्पसे अतीत है. 'एक स्थायी ज्ञायक तत्त्व...' एक स्थायी अर्थात् नित्य. स्थायी, स्थिर, नित्य, एकैरूप नित्य प्रभु 'ज्ञायक तत्त्व सो आत्मा है.' आलाला..! यहां तक ज्ञाना, प्रभु! तब जन्म-मरणका अंत आवे. आलाला..! जन्म-मरण कर-करके अनंत अवतार (किये). आलाला..! निगोटके अवतार अंतर्मुलूर्तमें ६६००० बार. आलाला..! वैराग्य, वैराग्य, वैराग्य आये. अंतर्मुलूर्तमें निगोटके भव. एक शरीरमें अनंत और असंभ्य भागमें. अंतर्मुलूर्तमें ६६३३६ भव अंतर्मुलूर्तमें किये. प्रभु! जैसे तो अनंत बार किये. आलाला..! तेरी सूझ नहीं की. मैं कौन हूं? मैं क्या हूं? उसका ज्वाल नहीं किया. आलाला..! 'विकल्पातीत एक स्थायी ज्ञायक तत्त्व...' एक स्थायी स्थिर बिंब नित्यानंद अचल अर्थात् चले नहीं, बढले नहीं, जिसमें पर्याय नहीं है, जैसा अचल बिंब आत्मा 'सो आत्मा है.' आलाला..!

नियमसारमें उटवीं गाथा है उसमें भी यही है. प्रभु! तू आत्मा कौन है? विकल्प तो नहीं, परंतु पर्याय भी नहीं. उटवीं गाथामें ऐसा कहा है. निश्चय ध्रुव स्वरूप भगवान अनादिअनंत अेकरूप, यौरासी लाख योनिमें घुमा, फिर भी जिसका अेकरूप कभी पलटा नहीं, ऐसी स्थायी यीज, ऐसी नित्य अविनाशी यीज प्रभु तू (है). आहाहा..! वहां उसे आत्मा कहा. उटवीं गाथामें अेक त्रिकावीको आत्मा कहा, वर यहां कहा. आहाहा..!

‘अेक स्थायी ज्ञायक तत्व सो आत्मा है.’ आहाहा..! आत्मा तो वर है. ँसकी दृष्टि करनेसे सम्यग्दर्शन, सत्य वस्तु जैसी है अैसे दर्शनकी प्रतीति होती है. सत्य वस्तु जैसी जैसी जैसे है, उसकी अंदर दृष्टि करनेसे सम्यक् अर्थात् सत्य जैसा है, वैसी प्रतीति उत्पन्न होती है. धर्मकी शरूआत वहांसे है. आहाहा..! ँसके सिवा दूसरे उपाय चारे जितने करे, मंथन और.. आहाहा..! विचार और मंथन.

कवशटीकामें लिया है, कवशटीका है, उसमें वर लिया है. विचार और मंथन आदि भी राग है. आहाहा..! प्रभु! तू तो निरागी ज्ञायक स्वरूप है न, प्रभु! अकेला चैतन्यबिंब, चैतन्यबिंब. उसमें तो पर्यायका भी अभाव है. उसको वहां निश्चय आत्मा कहते हैं. उट (गाथामें) लिया, वही वहां बहिनने कहा. निश्चय है वही आत्मा है. विकल्पातीत.. आहाहा..! और स्थायी. पर्याय बिनाका स्थायी. आहाहा..! ‘स्थायी ज्ञायक तत्व सो आत्मा है.’ आहाहा..! दूसरेका करना अथवा दूसरेसे कुछ लेना, वर तो उसमें है नहीं, परंतु अपनेमें अपना विचार और मंथन चले, वर विकल्प भी उसमें है नहीं. अैसा आत्मा जो है वर स्थायी है, स्थिर है, नित्य है, अविनाशी, अचल, शाश्वत वस्तु पडी है. आहाहा..!

‘उसमें ‘वर विकल्प तोड हूं..’ उसमें,.. आत्मा अैसा दृष्टिमें लेकर निश्चय आत्मा.. कठिन बात तो है, प्रभु! लेकिन मार्ग तो वर है, भाई! आहाहा..! .. नहीं आये हैं? राजकोट गये हैं. आहाहा..! ‘वर विकल्प तोड हूं, वर विकल्प तोड हूं’, वर भी विकल्प ही है;...’ आहाहा..! स्थायी यीजमें स्थिर नित्यानंद प्रभु, उसमें विकल्प आता है कि मैं आत्मा हूं या मैं ज्ञायक हूं, अैसा विकल्प, उसे तोड हूं, वर भी विकल्प है. आहाहा..! क्योकि विकल्प तोडनेमें पर्याय पर दृष्टि ज्ञयेगी. अपना शुद्ध प्रभु उसमेंसे हट ज्ञयगा और पर्यायमें आ ज्ञयगा. आहाहा..! अैसा आत्मा.

अैसा आत्मा सुना भी न हो, वर कब प्राप्त करे? मलाप्रभु पर्याय बिनाकी जो वस्तु है, राग तो नहीं, विकल्प तो नहीं, परंतु पर्याय बिनाकी यीज है. क्योकि

पर्यायसे तो निर्णय करना है. पर्यायमें पर्यायसे ध्रुवका निर्णय करना है. तो जिसमें निर्णय करना है वह चीज अंदरमें नहीं है. आह्लाहा..! ऐसी कठिन बात है, प्रभु! आह्लाहा..!

‘यह विकल्प तोड़ दूं, वह भी विकल्प ही है;...’ आह्लाहा..! ‘उसके उस पार भिन्न ही चैतन्यपदार्थ है.’ उसके उस पार-विकल्पके पार. आह्लाहा..! ‘भिन्न ही चैतन्यपदार्थ है.’ अंदर भगवान चैतन्यपदार्थ तो विकल्पसे भिन्न ही है. उसे पकड़े बिना, उसकी अनुभूति-अनुभव लुअे बिना उसका सम्यग्दर्शन होता नहीं. आह्लाहा..! सम्यग्दर्शन बिना धर्मकी शुद्धात-प्रारंभ भी होता नहीं. आह्लाहा..! ऐसी चीज भगवान तेरी चीज ऐसी है. आह्लाहा..! ‘उसका अस्तिपना ज्यालमें आये...’ उसका अस्तिपना-है, मौजूद है, स्थायी है, स्थिर है, नित्य है, ऐसा अस्तिपा ज्यालमें आये ‘मैं भिन्न हूं,’ मैं तो रागसे भी भिन्न हूं और पर्यायसे भिन्न हूं. ‘यह मैं ज्ञायक भिन्न हूं’ आह्लाहा..! ‘ऐसा निरंतर घोटन रहे...’ आह्लाहा..! समय कहां मिलता है? यहां तो कलते हैं, निरंतर घोटन रहे. क्योंकि भगवान आत्मा निरंतर नित्य है. तो नित्यमें पलुंचनेके लिये निरंतर घोटन चाहिए. आह्लाहा..! समझमें आया? प्रभु नित्य है, अविनाशी अविचल है. तो उसको प्राप्त करनेमें निरंतर उसका घोटन (चाहिये). विकल्प नहीं, उसके सन्मुख घोटन (चलना). आह्लाहा..!

‘निरंतर घोटन रहे, वह भी अच्छा है.’ अंतर सन्मुख छोड़ उसका रटन रहे, वह भी अच्छा है. उसका ही रटन. विकल्पका रटन छोड़ दे. आता है, व्यवहार है, परंतु वह आदरणीय नहीं. व्यवहार तो समस्त लोकालोक, अपने सिवा सब चीज व्यवहार है. निश्चयमें तो उसकी पर्याय भी व्यवहार है. आह्लाहा..! वह तो त्रिकावी भगवान अनंत नित्य अविनाशी अविचल गुणका भजना है. ‘मैं ज्ञायक भिन्न हूं, ऐसा निरंतर घोटन रहे, वह भी अच्छा है.’

‘पुरुषार्थकी उग्रता...’ पुरुषार्थकी उग्रता. वीर्यको स्वभाव सन्मुख करना, वीर्य-पुरुषार्थ जो पर सन्मुख अनादिसे रहा है, उस पुरुषार्थको स्वसन्मुख करना. ‘पुरुषार्थकी उग्रता तथा उस प्रकारका आरंभ हो तो मार्ग निकलता ही है.’ आत्मा प्राप्त होलता ही है. उस प्रकारका निरंतर रटन रहे और प्राप्त न हो, ऐसा है नहीं. लेकिन र्थस प्रकारसे प्राप्त होता है, दूसरे प्रकारसे प्राप्त होता नहीं. आह्लाहा..! ‘उस प्रकारका आरंभ हो तो मार्ग निकलता ही है. पहले विकल्प नहीं टूटता परंतु पहले पक्का निर्णय आता है.’ अजंडानंद प्रभु अनंत गुणकी राशि, ऐसा पक्का निर्णय आता है. निर्णय बिना विकल्प टूटे नहीं. आह्लाहा..! करना है तो यह है. लाभ बातकी

भात अंतर आणो, छोडी जगत द्रंढ इंद ओक निज आतम ध्यावो. निज आतम ध्यावो. वल यलं कल. वलवे पक्का निर्णय आता है. आलाला..! २७९ पूरा हुआ.

यह जो बाह्य लोक है उससे चैतन्यलोक पृथक् ही है. बाह्यमें लोग देखते हैं कि 'ईन्होंने ऐसा किया, ऐसा किया', परंतु अंतरमें ज्ञानी कहां रहते हैं, क्या करते हैं, वह तो ज्ञानी स्वयं ही जानते हैं. बाहरसे देखनेवाले मनुष्योंको ज्ञानी बाह्यमें कुछ कियाओं या विकल्पोंमें पडते दिखाई देते हैं, परंतु अंतरमें तो वे कहीं चैतन्यलोककी गहराईमें विचरते हैं. २८२.

२८२. 'यह जो बाह्य लोक है...' विकल्पसे लेकर जो बाह्य लोक है 'उससे चैतन्यलोक पृथक् ही है.' बाह्य लोकसे चैतन्यलोक पृथक् ही है. आलाला..! बाह्य लोकमें चैतन्य अकेलेक होता नहीं. और चैतन्यमें वल अकेलेक आता नहीं. ऐसा ही है. राग और भगवान आत्माके बीच संधि है. तड.. तड हमारी काठियावाडी भाषामें तड कहते हैं. (दरार). दरार है तो अंदर जाती है. आलाला..! राग और आत्माके बीच संधि है, प्रभु! उसमें संधि कर. आलाला..! 'चैतन्यलोक पृथक् ही है.'

'बाह्यमें लोग देखते हैं कि ईन्होंने ऐसा किया...' बाहरकी क्रिया देखे, उन्हींने वल किया, वल किया, वल छोडा, कपडे छोडे, जाना छोडा, रस छोडा, जानेमें अके यीज भाते हैं, दूसरी छोडते हैं, वल सब बाह्यकी बात है. वल कोई यीजसे आत्माकी प्राप्ति होती है ऐसा है नहीं. आलाला..! 'बाह्यमें लोग देखते हैं कि ईन्होंने ऐसा किया, ऐसा किया' स्त्री छोड दी, कुटुंब छोड दिया, धंधा छोड दिया, उसमें क्या हुआ? प्रभु! विकल्प छोड दिया ऐसा जबतक नहीं आये, तबतक कुछ छूटा नहीं. आलाला..!

'परंतु अंतरमें ज्ञानी कहां रहते हैं,...' आलाला..! अंतरमें भगवान आत्मा ज्ञाननेमें-ज्ञानमें, अनुभवमें आया तो धर्मी अंदरमें कहां रहते हैं, क्या करते हैं, आलाला..! अंतरकी बात लोग नहीं जान सकते. आलाला..! बाह्यमें तो चक्रवर्तीका राज है. अंदरमें भिन्न है. अंदरमें रागसे भिन्न है. आलाला..! 'ईन्होंने ऐसा किया, ऐसा किया' परंतु अंतरमें ज्ञानी कहां रहते हैं...' आलाला..! सम्यग्दृष्टि-ज्ञानी, जिसने आत्माका पता ले लिया, निर्विकल्प आत्मा विकल्पसे पार पर्यायमें भी उससे पार, लेकिन पर्यायमें निर्णय कर लिया. निर्णय तो पर्यायमें होता है. वस्तु पर्यायसे पार है. आलाला..! जिसका निर्णय करना है और निर्णय करता है, दोनों वस्तु भिन्न

हैं. आह्ला..! बहुत कठिन बात, प्रभु! निर्णय करती है पर्याय, निर्णय करने वायक ध्रुव. आह्ला..! दो चीज भिन्न हैं. 'अंतरमें ज्ञान कहां रहते हैं, क्या करते हैं, वह तो ज्ञानी स्वयं ही जानते हैं.' धर्मीको मावूम पडे कि में कहां हूं. आह्लाके साधारण प्राणी आह्य येष्टा देभनेसे अनुमान कर ले कि यह ऐसा है. ऐसा है नहीं. आह्ला..!

'आह्लासे देभनेवावे मनुष्योंको ज्ञानी आह्यमें कुछ क्रियाओं करते हैं या विकल्पोंमें पडते दिभाई देते हैं...' आह्ला..! अंतरमें विकल्पसे रहित निरंतर ज्ञानधारा (यवती है). भेदज्ञान हुआ आह्यमें भेदज्ञान करना नहीं पडता. वह शुरू हो गया. रागसे भिन्न हुआ तो भिन्न ही रहेगा. अंदरमें क्या होता है (वह ज्ञानी ही जानते हैं). 'ज्ञानी आह्यमें कुछ क्रियाओं करते हैं या विकल्पोंमें पडते दिभाई देते हैं, परंतु अंतरमें तो वे कहीं चैतन्यलोककी गहराईमें विचरते हैं.' आह्ला..! आह्लामें विकल्पमें दिभते हैं. आह्य क्रिया करते दिभाई देते हैं, परंतु अंतरमें.. आह्ला..! चैतन्यलोककी गहराईमें (विचरते हैं). चैतन्यलोक अंदर भगवान, उसकी गंभीरता, उसकी गहनता.. आह्ला..! ज्ञानी उसमें विचरते हैं. उसका पता आह्य क्रियाकांडवावेको नहीं होता. आह्यसे देभता है कि इसने इतना त्याग किया, इसने त्याग नहीं किया, इसने किया,.. आह्ला..!

ज्ञानीको तो कदाचित् चारित्रमोहके उदयमें कोई दोष भी आता है. लेकिन अंदरमें क्या है? आह्ला..! अंदरमें आनंदमें रमते हैं. आह्ला..! आह्यकी क्रिया भिन्न रह जाती है, विकल्पकी क्रिया भी भिन्न रहती है. अंदरमें रागसे, विकल्पसे भिन्न ज्ञानमें काम लेते हैं, वह आह्लावावेको दिभाई नहीं देता. आह्ला..! बहुत सूक्ष्म बात, भाई! मूल बात तो यह है.

'चैतन्यलोककी गहराईमें विचरते हैं.' चैतन्यलोककी गंभीरता, अनंत गुणकी गंभीरता उसमें धर्मी तो विचरते हैं. आह्य क्रिया देभनेवावेको पता नहीं चलता. आह्ला..! आह्य क्रिया देभे, चारित्रमोहके उदयमें जुड जाय, चारित्रदोष आ जाय, लेकिन अंदरमें क्या करते हैं..आह्ला..! कठिन बात है. ८६ लंकार श्री यकवर्तीको. फिर भी अंदरमें क्या करते हैं? सबसे भिन्न. उस ओरके विकल्पसे भी भिन्न काम करते हैं. आह्ला..! भिन्न काम जो अंदर शुरू हो गया, वह क्या चीज है, उसका अज्ञानी पता नहीं लेता, अज्ञानी जान नहीं सकते. आह्ला..! आह्यकी क्रिया, कैसे निवृत्ति ली है, जैसे पर उसका लक्ष्य है. 'चैतन्यलोककी गहराईमें विचरते हैं.' २८२ (पूरा हुआ).

ज्ञानीको 'में ज्ञायक हूं' ऐसी धारावाही परिणति अभंडित रहती है. वे भक्ति-शास्त्रस्वाध्याय आदि बाह्य प्रसंगोंमें उद्वासपूर्वक भाग लेते दिखायी देते हैं तब भी उनकी ज्ञायकधारा तो अभंडितरूपसे अंतरमें भिन्न ही कार्य करती रहती है. २८४.

२८४. दोसौ यौरानवे कहते हैं न? 'ज्ञानीको 'में ज्ञायक हूं' ऐसी धारावाही परिणति अभंडित रहती है.' में ज्ञायक हूं, यह दृष्टि और परिणति अभंडित रहती है. किसी भी प्रसंगमें बाह्यमें आ जाओ, लेकिन अंदरकी दृष्टि टूटती नहीं. 'ज्ञानीको 'में ज्ञायक हूं' ऐसी धारावाही...' धारावाही ज्ञानधारा. वह आया है न कलशमें? दो धारा साथमें चलती है. जबतक कर्मसे भिन्न हो, ज्ञानधारा और कर्मधारा (दो धारा चलती है). अंदर आत्माका ज्ञानका आनंद वह भी चले और रागका दोष हो वह भी चले. (जबतक) वीतराग न हो जाय. परंतु अंदरमें रागसे भिन्न काम कैसे करते हैं, उसे लोग नहीं देख सकते. राग और रागकी क्रिया देखते हैं. आह्लाहा..! ऐसा स्वभाव. आह्लाहा..! 'ऐसी धारावाही परिणति अभंडित रहती है.'

'वे भक्ति-...' भगवानकी भक्ति, 'शास्त्रस्वाध्याय आदि बाह्य प्रसंगोंमें उद्वासपूर्वक भाग लेते...' हैं. आह्लाहा..! बाहरमें दिखे कि उद्वासपूर्वक भाग लेते हैं. 'दिखायी देते हैं...' 'उद्वासपूर्वक भाग लेते दिखायी देते हैं...' आह्लाहा..! 'तब भी उनकी ज्ञायकधारा...' आह्लाहा..! अंदरमें ज्ञायक-ज्ञानधारा जो आनंदधार प्रगट हुयी है, वह अभंडितरूपसे अंतरमें, 'अभंडितरूपसे अंतरमें भिन्न ही कार्य करती रहती है.' आह्लाहा..! देखी क्रिया भी होती है, विकल्प भी दिभता है, परंतु अंदरमें उससे भिन्न काम करते हैं. धर्मीकी दृष्टि ध्रुव द्रव्य पर होती है. आह्लाहा..! ध्रुवके अवलंबनमें ध्रुवका जेव जेवती है. आह्लाहा..! पर उपरका लक्ष्य होनेके आवजूद अंतरमेंसे छूट गया है. आह्लाहा..! बाहरकी क्रिया और विकल्प होने पर भी अंतरमेंसे छूट गया है. आह्लाहा..! यह बात कौन जाने? बाहर देखनेवाला बाहर देखे. आह्लाहा..!

अक जंगलमें रहता है, कपडेका टूकडा नहीं, ओलता नहीं, मौन रहता है और अक ज्ञानी लडाईमें भडा हो, दोनोंमें भेद कैसे देखना? भले जंगलमें अकेला रहता हो, लेकिन अंदर विकल्पमें अकता है. सब छोड दिया, परंतु अंदर विकल्पकी अकता है तो मिथ्यात्व है. और यह लडाईमें है, विकल्पकी अकता टूट गयी है तो लडाईमें भी वह समकितती है. क्षायिक समकितती है. आह्लाहा..! कठिन बात. बाहरसे नाप

निकलना कठिन है. अंतरकी चीजका बाहरसे नाप आना कठिन है. बाहरकी चीज अंदरमें नहीं और अंदरकी चीज बाहरमें नहीं. आलाला..! दोनों भिन्न-भिन्न काम करती है. ऐसा नहीं देखता है और बाहरसे देखता है, वह ज्ञानीकी पीछान नहीं कर सकता. आलाला..! 'अभंडितरूपसे अंतरमें भिन्न ही कार्य करती रहती है.' आलाला..!

यद्यपि दृष्टि-अपेक्षासे साधकको किसी पर्यायका या गुणभेदका स्वीकार नहीं है तथापि उसे स्वयंप्रति स्थिर हो जानेकी भावना तो वर्तती है. रागांशरूप बहिर्भुजता उसे द्रुमरूपसे वेदनमें आती है और वीतरागता-अंशरूप अंतर्भुजता सुभरूपसे वेदनमें आती है. जो आंशिक बहिर्भुज वृत्ति वर्तती हो उससे साधक न्याराका न्यारा रहता है. आंभमें किरकिरी नहीं समाती उसी प्रकार चैतन्यपरिणतिमें विभाव नहीं समाता. यदि साधकको बाह्यमें-प्रशस्त-अप्रशस्त रागमें-द्रुम न लगे और अंतरमें-वीतरागतामें-सुभ न लगे तो वह अंतरमें क्यों जाये? कहीं रागके विषयमें 'राग आग दहै' ऐसा कहा हो, कहीं प्रशस्त रागको विषकुंभ कहा हो, याहि जिस भाषामें कहा हो, सर्वत्र भाव ओक ही है कि-विभावका अंश वह द्रुमरूप है. लगे ही उसमें उस्य शुभभावरूप या अतिसूक्ष्म रागरूप प्रवृत्ति हो तथापि जितनी प्रवृत्ति उतनी आकुलता है और जितना निवृत्त होकर स्वयंप्रति लीन हुआ उतनी शांति एवं स्वयंप्रानंद है. २८५.

२८५. 'यद्यपि दृष्टि-अपेक्षासे साधकको किसी पर्यायका...' आलाला..! कोई भी पर्यायका 'या गुणभेदका स्वीकार नहीं है...' सूक्ष्म बात है, भगवान! दृष्टि जहां आत्माकी दुर्घ, सम्यक् अनुभव (दुआ), उसको... आलाला..! 'दृष्टि-अपेक्षासे साधकको किसी पर्यायका...' किसी पर्यायका. अपनी कोई भी पर्याय हो, किसी पर्यायका 'या गुणभेदका स्वीकार नहीं है...' आलाला..! क्योंकि अभेद पर दृष्टि पड़ी है. अभेदमें दृष्टिका विषय अंदरमेंसे ले लिया है. दृष्टिका विषय अभेद अंदरमें ले लिया है. अतीन्द्रिय आनंदकी धारा चलती है. आलाला..! 'दृष्टि-अपेक्षासे साधकको किसी पर्यायका...' कोई पर्यायका. आलाला..! 'या गुणभेदका...' ओहोहो..! आत्मा आनंद है, अनंत ज्ञान है, भगवान उसका धरनेवाला है, गुणीका गुण है और गुण गुणीका है,.. आलाला..! जैसे भेदका भी स्वीकार नहीं. आलाला..!

मुमुक्षु :- यमत्कारिक बात है.

उत्तर :- यमत्कारिक बात है. वचनमृत. आलाला..!

अनुभवमेंसे बात निकल गयी है, बाहर आ गयी है. जगतको रुचि, न रुच्ये स्वतंत्र है. बात कोई अवैकिक है! कला न?

‘यद्यपि दृष्टि-अपेक्षासे तो साधकको...’ साधकको ‘किसी पर्यायिका...’ कोई भी पर्यायिका पक्ष नहीं है. ‘या गुणभेदका स्वीकार नहीं है...’ पर्यायिका और गुणभेदका. ओलोलो..! दृष्टि तो त्रिकाली अभेदमें अेकाकार हो गयी है. अेकाकारका अर्थ उस ओर जुक गयी है. पर्यायि और द्रव्य अेक होते नहीं. उस ओर जुक गयी तो उसको अेकाकार कहनेमें आता है. आलाला..! अेक पर्यायि अंदरमें जुक गयी तो द्रव्य पर्यायिको स्वीकारता नहीं. आलाला..!

‘तथापि उसे स्वप्नमें स्थिर हो जानेकी भावना तो वर्तती है.’ तथापि धर्मीको.. आलाला..! स्वप्नमें स्थिर होनेकी भावना तो वर्तती है. तथापि ‘रागांशुप बलिर्भुजता उसे दुःखस्वप्नसे वेदनमें आती है...’ आला..! उसको राग दुःखस्वप्न लगता है. मलाप्रतका परिणाम, परमात्माकी लक्ष्तिमें उद्वास दृष्टि, आठवें द्विपमें नंदिश्वरमें ईन्द्र जाते हैं. धुंधरु बांधकर नाचते हैं. बाहरकी क्रिया दृष्टिया देजे, लेकिन अंदरमें उसको कोई संबंध नहीं है. आलाला..! अेकावतारी है. शकेन्द्रि उर लाज विमानका स्वामि. अेक पर्यायिका भी स्वामि नहीं है. अेक पर्यायिका भी स्वीकार नहीं. पर्यायिने द्रव्यका स्वीकार किया तो अब पर्यायिका स्वीकार नहीं है. आलाला..! सूक्ष्म बात है. अंतरकी बात है.

‘स्वप्नमें स्थिर हो जानेकी भावना तो वर्तती है. रागांशुप बलिर्भुजता...’ आलाला..! रागका अंश आता है. चारित्रका दोष होता है. आलाला..! समकितिको क्षायिक समकिति श्रेणिक राजा. उसका पुत्र जेवमेंसे छुडाने आया. हाथमें लथियार लेकर तोडनेको आया. उन्हें शंका लुयी. है सम्यज्ज्ञानी, है क्षायिक समकिति. शंका लुयी कि यह मुजे मारने आ रहा है. आलाला..! फिर भी वह ज्ञान मिथ्याज्ञान नहीं है. समजमें आया?

कोणिक आता है, उसका लडका कोणिक. कोणिक जब गर्भमें था तो बूरे (सपने) आते थे, उसकी माताको बूरे स्वप्न आते थे. श्रेणिक राजाका क्लेण भा जाउं. जैसे. श्रेणिक राजाकी रानीको बालक आया. उसे लगा, ऐसा स्वप्न आया तो उसके पिताज्जको क्या करेगा? जैसा आया वैसा, क्यरेके ढेरमें डाल दिया. आलाला..! श्रेणिक राजा आते हैं. क्या हुआ? बालक कहां है? प्रसव हो गया है. बालकको मैंने क्यरेके ढेरमें, लमारी भाषा उकरडा, उसमें डूंक दिया है. क्योंकि जब वह (गर्भमें) था, तो आपका क्लेण जानेका स्वप्न आया था. आपका क्लेण जाना है, ऐसा सपना आता था. तो भी श्रेणिक राजा... अंदरमें तो क्षायिक समकित पडा है. आलाला..!

बाहरसे.. अरे..! कहां लडका पडा है? क्यरेके ढेरमें. वहां गये, वहां गये. उठा लिया बालकको. बालक तो अभी ताजा था. वहां मुर्गा था. चोंच मारी होगी. पशु हो गया. पीडा.. पीडा.. पीडा. बालक रोता था. अक दिनका बालक था. रोता था. पिताज.. आलाला..! क्षायिक समकित्ती. क्रिया औसी द्रिभे. आलाला..! उसका हाथ यूसते थे. अरेरे..! ँस बर्येको औसा दुःभ! उसकी श्रीको सपना आया था, वल भूल गया. रोता है तो छोड दे. वल बालक अभी दुःभी है. मुर्गेने चोंच मारी है तो अंगूलीमें मवाद हो गया है, भूनमें मवाद हो गया है. तो स्वयं यूसते हैं, भून यूसते हैं. आलाला..! कोई द्रिभे कि अरेरे..! ँतना प्रेम! बालकको ँतना प्रेम! जिसका मवाद यूसते हैं. प्रभु! वल क्रिया भिन्न है. हां! आलाला..! अंतरकी क्रिया भिन्न है. आलाला..! अंतरमें तो क्षायिक समकित है कि जिस समकितको केवलज्ञानमें ले जाना है. वली समकित सिद्धमें जायेगा. आलाला..!

उसकी वल क्रिया द्रिभकर अज्ञानीको औसा लगे, वल क्या करते हैं? लेकिन वल क्रिया होनेवाली हो तो हो, अंतर द्रिष्टि तो आत्मा पर-आनंद पर है, वल किस्कीको स्वीकारती नहीं. विकल्पको यूसनेकी क्रियाको स्वीकार नहीं करती. वल क्रिया मेरी नहीं और मैं कर्ता नहीं. आलाला..! यूसनेकी क्रिया होती है तो वल क्रिया मेरी नहीं और मैं कर्ता नहीं. आलाला..! औसी अंदरमें क्षायिक समकितमें परिणति निरंतर धारा बलती है. आलाला..! अंतर धारा और बाहरकी क्रियामें बहुत र्क है. ज्ञानधारा भिन्न है.

वल कलते हैं, 'रागांशरूप बलिर्भुभता उसे दुःभरूपसे वेदनमें आती है...' ज्ञानीको भी... वल बात बैठती नहीं थी न, दीपयंदज सेठिया. सरदार शहर. वहां बारल महिनमें अक बार आठ दिन आये. उसमें सोगानीका पढा. सोगानीका द्रव्यद्रिष्टि प्रकाश. उनको सलन नहीं हुआ. ये कौन जागा? ये तो शुभत्मावको भी दुःभ कलते हैं. उसमें औसा हो गया कि ज्ञानीको दुःभ होता ही नहीं, दुःभ वेदे वल ज्ञानी नहीं. औसी द्रिष्टि बदल गयी. आलाला..! विरोध हो गया था. ज्ञानीको दुःभ है ही नहीं. वहां बलिन कलती है, ज्ञानीको 'रागांशरूप बलिर्भुभता उसे दुःभरूपसे वेदनमें आती है...' जितना राग है ँतना दुःभ है. तीन कषाय गया नहीं. श्रेणिक राजको क्षायिक समकित है. अक कषाय गया है. तीन कषाय नहीं गये हैं तो तीन कषायका दुःभ है. आलाला..! भवे उसे भिन्न जानते हैं, परंतु वेदनमें है. जितना कषाय गया, उतना आनंदका वेदन है. आलाला..! जितना कषाय रला उतना दुःभका वेदन है. समकित्तीको दो वेदन है.

बडी चर्चा दीपचंदलसे विरोध हो गया था. दीपचंदल... भाईने कहा था न. सोगानी. समकित्तिको शुभभाव भी दुःखरूप लगता है. वह उन्हें नहीं ज्ञा. यहां बारह महिनेमें आठ दिन आते थे. प्रेम बहुत था. परंतु आभिरमें द्रव्यदृष्टि प्रकाश देकर इरकार हो गया. ज्ञानीको दुःख होता ही नहीं. दुःख वेदे वह तीव्र कषाय है. यहां तो रागांश है ऐसा कहते हैं. तीव्र कषाय नहीं. तीव्र कषाय तो समकित्तिको गया है. अनंतानुबंधी तो गया है. आलाला..!

‘रागांशरूप बहिरुभता उसे दुःखरूपसे वेदनमें आती है...’ दुःखरूप दिभता है. आलाला..! कोरि चीज दुःखरूप नहीं लगती. चीज पर लक्ष्य जाता है वह दुःखरूप लगता है. चीजको तो छूते भी नहीं. अक चीज दूसरी चीजको छूती नहीं. वह तो तीसरी गाथामें आया. समयसार. अक द्रव्य दूसरे द्रव्यको कभी चुंभता नहीं, छूता नहीं, स्पर्श करता नहीं, प्रवेश करता नहीं, स्पर्शता नहीं. आलाला..! इर भी धर्मा-समकित्तिको कमजोरीसे चारित्रका दोष आता है. वह दुःखका वेदन है. आलाला..! अक ओर आनंदका वेदन है, अक ओर दुःखका वेदन है. आलाला..! गजब बात, प्रभु! तीर्थकर त्रिलोकनाथ परमात्माके अभिप्रायका हृदय कोरि अवलौकिक है! दुनियामें कहीं नहीं है. आलाला..! ऐसी चीज है.

यहां कहा, रागांश विया न? क्योंकि समकित्ती तो है. वह तो कहा. दृष्टि अपेक्षासे तो कहा है. साधक तो विया है. साधक तो है. ‘किसी पर्यायिका, गुणल्लेदका स्वीकार नहीं है...’ ठतना स्वीकार नहीं है, इर भी ‘तथापि...’ तो भी. आलाला..! ‘उसे स्वरूपमें स्थिर हो जानेकी भावना तो वर्तती है. तथापि रागांशरूप बहिरुभता..’ आलाला..! चारित्रदोष दूसरी चीज है, समकित्त चीज दूसरी है. अक गुणका दोष यदि दूसरे गुणको करे तो गुण उत्पन्न होता ही नहीं. चारित्रका दोष समकित्तको बिलकुल अवरोध नहीं करता. आलाला..! वह अस्थिरताका दोष है, समकित्तमें पूरे चैतन्यका अंदरसे आदर हुआ है. पूर्णानंदका नाथका आदर है. यहां रागका अंश आता है. आदर नहीं, स्वीकार नहीं, इर भी वेदन है. आलाला..! क्योंकि अपनी पर्यायिमें है न. दूसरेमें नहीं होता. आलाला..!

‘रागांशरूप बहिरुभता उसे दुःखरूपसे वेदनमें आती है...’ आलाला..! श्रेणिक राज लउकेको यूसते हैं, उस वक्त जो राग आया है, उसको दुःखका वेदन है. आलाला..! आत्माका भाव तो है ही, परंतु यूसते वक्त राग है. धत्रावावलल! रागका वेदन है. आलाला..! तीर्थकर होंगे. अभी भी तीर्थकरगोत्र बांधते हैं. नर्कमें भी तीर्थकर गोत्र समय-समयमें बांधते हैं. यहांसे शुरू हो गया है. यहांसे निकलेंगे तबतक बांधेंगे.

आलाला..! और माताके पेटमें आयेंगे.. आलाला..! ईन्द्र, उनका आना ज्यालमें है, तो ईन्द्र माताके पेटको साइ करतें हैं. जैसे कोई बडा आदमी आये तो जमीन आदि साइ करतें हैं, वैसे ईन्द्र.. आलाला..! ईन्द्र भी समकित्ती है, अकेवतारी है, अभी, अभी. आलाला..! श्रेणिकराज अभी चौथे गुणस्थानमें है. तीर्थकर होनेवाले हैं. माताके पेटमें आनेवाले हैं तो माताका पेट साइ करतें हैं. जैसे सिंहासन साइ करे, वैसे. सवा नव महिने.. आलाला..!

माताके पेटमें क्षायिक समकित्ती तीर्थकरका जव, बाहर निकलकर तीर्थकर होंगे. आलाला..! अभी जन्म लोगा तब ईन्द्र आकर माताको पादवंदन करेगा. जनेता! माता! तुजे पहले नमस्कार! जैसे पुत्रको जन्म दिया. ऐसा पाठ है. आलाला..! जगतका कल्याण करनेमें निमित्त होंगे. जैसे पुत्रको माता! तूने जन्म दिया. जनेता! तू उनकी जनेता नहीं, तू जगतकी माता है. आलाला..! माता! तुजे हम नमस्कार करतें हैं. बादमें पुत्रको नमस्कार करतें हैं. आलाला..! ऐसी चीजमें दर्शन भिन्न है, दोष भिन्न है. श्रेणिकको भी भिन्न है, ईन्द्रको भी भिन्न है. आलाला..! ईन्द्र भी समकित्ती है. शास्त्रमें लेख है, वहांसे निकलकर मोक्ष जाता है.

कहा था न? भगवान जब मोक्ष पधारे (तब) भरत अष्टापद पर्वत पर गये. जैसे देखा तो जवरहित. आंभमें आंसुकी धारा चली. पिताको देखकर देह छूट गया. आंसुकी धारा (चलती है). ईन्द्र आया. ईन्द्र भी साथमें था. भैया! क्या करतें हो? क्या है? क्यों रोतें हो? आपका अंतिम देह है, मुजे तो अभी अक देह धारण करना है. देव कहतें हैं, अभी तो मुजे अक देह धारण करना है. तेरा तो यह अंतिम देह है. ईन्द्र! सब ज्यालमें है. ऐसा कहा. सब ज्यालमें है, बापू! परंतु रागका काम राग करता है, हमारा काम हम करतें हैं. ये दो चीजकी भिन्नता जानना. आलाला..! सम्यग्दर्शन और राग, अक समयमें दोनों होते हैं. उसका वेदन भी है. वेदन नहीं है ऐसा नहीं. वेदन करे ईसलिये तीव्र कषायवंत है, ऐसा है नहीं.

‘रागांशुप बलिर्भुजता उसे दुःखरूपसे वेदनमें आती है और वीतरागता...’ साथमें वीतरागता है उतने ‘अंशुप अंतर्भुजता सुखरूपसे वेदनमें आती है.’ अक समयमें अकसाथ. आलाला..! साधकजवको, साधकको कहा न? उपर. ‘दृष्टि-अपेक्षासे साधकको...’ ऐसा आया है. अपने स्वभाव सन्भुजका आनंद भी है और राग भी आता है, क्रियाकांडका अनेक प्रकारका, उसका दुःख भी है. आलाला..! दोनों अकसाथ हैं.

मिथ्यादृष्टिको पूर्ण दुःख है, केवलीको पूर्ण सुख है, साधकको अपूर्ण आनंद और अपूर्ण दुःख है. आलाहा..! मिथ्यादृष्टिको पूर्ण दुःख. चाहे राजा हो, बडा करोडपति, अरबपति, सुंदर रूप हो, बाहरमें जाने-पीनेमें मौज करता हो, मलदुःखी है, कषाय है. आलाहा..! और समझिती सुधी है. नर्कमें भी जितना राग गया उतना सुधी है. श्रेणिक राजाको अनंतानुबंधी गया है, उतना तो सुख है वहां नर्कमें भी. जितना कषाय है, उतना दुःख है. साधकको बाधकपना बाकी है. नहीं तो साधक क्यों कदा? नहीं तो साध्य पूर्ण हो जाना चाहिये. आला..! थोडा राग है, उतना वेदन आता है.

‘जो आंशिक बहिर्मुख वृत्ति वर्तती हो उससे साधक न्याराका न्यारा रहता है.’ आलाहा..! विशेष है. ‘आंभमें किरकिरी नहीं समाती...’ आंभमें रजकण नहीं समाता. ‘उसी प्रकार चैतन्यपरिणतिमें विभाव नहीं समाता.’ चैतन्यकी आनंद परिणतिमें विभाव नहीं आता. जैसे आंभमें रजकण नहीं समाता, वैसे चैतन्यमें नहीं समाता. विशेष कहेंगे... (श्रोता :- प्रमाण वचन गुरुदेव!)